हिन्दी कथा साहित्य में
वृद्ध विमर्श

संपादक : डॉ. दिलीप मेहरा

हिन्दी कथा-साहित्य में वृद्ध विमर्श

संपादक
डॉ. दिलीप मेहरा

उत्कर्ष पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, कानपुर

ISBN - 978-81-950501-8-5

पुस्तक : हिन्दी कथा-साहित्य में वृद्ध विमर्श

संपादक : © डॉ. दिलीप मेहरा

प्रकाशक : उत्कर्ष पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

A-685 आवास विकास, हंसपुरम्, कानपुर -208 021 (उ.प्र.)

Email : utkarshpublisherskanpur@gmail.com

Mob. : 8707662869, 9554837752

संस्करण : प्रथम, 2021

मूल्य : 1195/-

आवरण सज्जा : तबारक अली, पटकापुर, कानपुर

शब्द-सज्जा : रुद्र ग्राफिक्स, कानपुर

मुद्रक : सार्थक डिजिटिल, कानपुर

Hindi Katha Sahitya Mein Vriddha Vimarsh

by : Dr. Dilip Mehra

Price : One thousand One hundred ninty five only.

अनुक्रम

कथा साहित्य

1. वृद्ध विमर्श की अवधारणा
नीलम वाधवानी 15

2. हिन्दी कथा साहित्य : वृद्ध विमर्श की दृष्टि से
डॉ. दिलीप मेहरा 29

3. हिन्दी दलित कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श
डॉ. सुशीला टाकभौरे 40

4. हिंदी कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श
डॉ. आरिफ महात 51

5. समकालीन कथा साहित्य में वृद्ध विमर्श
डॉ. धन्यकुमार जिनपाल बिराजदार 61

6. रेत सा तन ढह गया है
प्रो. शिव प्रसाद शुक्ल 66

7. समाज और साहित्य में बुजुर्गों की दयनीय स्थिति
डॉ. कल्पना गवली 71

8. प्रभा खेतान के कथा-साहित्य में वृद्ध संदर्भ
डॉ. देव्यानी महिड़ा 78

उपन्यास साहित्य

9. अंतिम पड़ाव का जीवन
डॉ. रमेश चंद मीणा 89

10. हिंदी उपन्यासों में वृद्धों के मृत्यु बोध से संबंधित चिंतन और उसका भय
डॉ. रोशन कुमार झा 104

11. हिंदी उपन्यासों में चित्रित वृद्धों के धुंधभरे जीवन
(विशेष सन्दर्भ : गिलिगडु, समय सरगम और अंतिम अरण्य)
डॉ. उषा मिश्रा 113

12. वृद्धावस्था केंद्रित प्रतिनिधि हिन्दी उपन्यास
अंकिता शर्मा 118

13. काशीनाथ सिंह के उपन्यासों में वृद्ध विमर्श
डॉ. जितेन्द्र कुमार सिंह 124

14. अमरकांत के उपन्यास : वृद्ध मानसिकता के संदर्भ में
डॉ. धर्मेंद्र सिंह ठाकोर 133
15. अलका सरावगी के उपन्यासों में बूढ़े-बुजुर्गों का एकाकीपन
डॉ. सत्यवती चौबे 139
16. डॉ. सूरज सिंह नेगी के उपन्यास साहित्य में वृद्ध विमर्श
नीलम वाधवानी 146
17. वृद्धावस्था और अग्निपंखी
सोलंकी केतनकुमार. वी 152
18. वैश्वीकरण एवं बाजारवादी संस्कृति के बीच पिसते वृद्ध
('दौड़' उपन्यास के विशेष संदर्भ में)
डॉ. दिलीप मेहरा 159
19. वृद्धों और वृद्ध होते लोगों के जीवन का गान : समय सरगम
डॉ. नवीन नंदवाना 163
20. वृद्धावस्था का यथार्थ निरूपण : अंतिम अरण्य
डॉ. भानुबहन ए. वसावा 174
21. वृद्धावस्था की विवशता : रेहन पर रग्घू
डॉ. अनिला मिश्रा 184
22. वृद्ध जीवन की पीड़ा का यथार्थ दस्तावेज : 'गिलिगडु'
डॉ. एन. टी. गामीत 191
23. संध्या छाया : वृद्ध जीवन के यथार्थ अनुभूति की अभिव्यक्ति
डॉ. प्रवीण चंद्र बिष्ट 201
24. चार वृद्ध दरवेशों की दु:खद कथा : चार दरवेश
दीपिका नारणभाई वाघेला 213
25. वृद्ध विमर्श और 'चार दरवेश'
अनुराधा चौहान 217
26. 'सफेद पर्दे पर' उपन्यास में वृद्ध विमर्श
सुमेरदान 221
27. स्त्री वृद्धत्व की पीड़ा का जीवन्त दस्तावेज : दाई
डॉ. पार्वती गोसाई 225

कहानी साहित्य

28. अगले जनम मोहे वृद्ध न कीजो...
(वृद्धावस्था की कहानियों के विशेष सन्दर्भ में)
डॉ. पार्वती गोसाई 233

29. हिन्दी कहानी साहित्य मे दस्तक देता वृद्ध विमर्श
डॉ. दीपिका परमार
30. प्रेमचंद की कहानियों में वृद्ध सरोकार 244
डॉ. राजेन्द्र परमार
31. हिंदी कहानियों में संध्या बेला की त्रासदी 251
डॉ. हिरल शादीजा
32. पिता : घर की चौखट पर बिखरते सपनें 258
डॉ. रमेश चंद मीणा
33. पर्त-दर-पर्त खुलती वृद्ध संवेदना: सूर्यबाला की कहानियाँ 263
प्रो. रंजना अरगडे
34. वृद्धविमर्श और मृदुला गर्ग की कहानियाँ 276
डॉ. अनु पांडेय
35. पीढ़ियों का द्वंद्वात्मक सम्बन्ध और चित्रा मुद्गल 287
हिरन दूबे
36. हिंदी कहानियों में झलकता वृद्धों का दर्द 293
डॉ. नीतू परिहार
37. भीष्म साहनी की कहानियाँ : वृद्ध विमर्श के आइने में 298
डॉ. अनु मेहता
38. डॉ. दिलीप मेहरा की कहानियों में वृद्ध विमर्श 303
वाघेला प्रियंका नारणभाई
39. इक्कीसवीं सदी की कहानियों में वृद्धावस्था का सरोकार 309
शालिनी चौहान
40. इक्कीसवीं सदी की कहानियों में वृद्ध विमर्श : 'वाङ्मय' पत्रिका की कहानियों के परिप्रेक्ष्य में 318
डॉ. संगीता चौहान
41. धन्यकुमार बिराजदार की कहानियों में वृद्ध विमर्श 326
डॉ. स्मिता खंडप्पा सिताफले
42. राजस्थान के हिंदी कहानी लेखन में वृद्ध विमर्श 336
डॉ. सुरेश सिंह राठौड़
43. प्रवासी कथाकार सुषम बेदी की कहानियों में अभिव्यक्त वृद्ध स्त्री-जीवन की त्रासदी 340
अर्चना गुप्ता
44. हिन्दी कहानियों में वृद्ध विमर्श : 'वापसी' के संदर्भ में 353
डॉ. प्रीति भट्ट 363

45. पिता-पुत्र के संबंधों का खुला आकाश : 'पिता' कहानी के संदर्भ में
डॉ. नीता त्रिवेदी 368
46. वृद्ध विमर्श की अधिरोहिणी कहानी 'अग्निदाह'
नीलम वाधवानी 373
47. जीवन का अंतिम पड़ाव : मन्नू भंडारी की कहानियाँ
मगर सविता उत्तम (गावडे) 379
48. 'सूखे पत्तों का शोर' कहानी में वृद्ध पिता की मनोव्यथा
सुहानी ठाकोर 385
49. वृद्ध विमर्श और 'हंसा ताई'
डॉ. किरणसिंह जी. बारैया 391
50. 'बेटा' कहानी में व्यक्त वृद्ध विमर्श
डॉ. भावना ठक्कर 398
51. कलियुग की वृद्धावस्था का भयावह यथार्थ : साजिश
डॉ. संगीता चौहान 404

पिता-पुत्र के संबंधों का खुला आकाश : 'पिता' कहानी के संदर्भ में

डॉ. नीता त्रिवेदी

साहित्य मानवीय चेतना का प्रतिफलन है। मनुष्य में उसकी चेतना ही वह शक्ति है जिससे वह अपने परिवेश का मूल्यांकन करता है। डॉ. राम प्रसाद त्रिपाठी ने हिंदी विश्वकोश में चेतना को इसी रूप में प्रस्तुत किया है – "चेतना स्वयं को और अपने आसपास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।"[1]

ऐसे ही अपने जीवन, अपने समाज से विषय लेकर अपनी भाषा की कसौटी पर संवेदनाओं का मूल्यांकन करने वाले, मानवीय चेतना को अपने साहित्य से पाठक के चित्त तक पहुंचाने वाले कथाकार हैं– ज्ञानरंजन। ज्ञानरंजन की पुस्तक के ब्लर्ब(परिचय) में लिखी बात एकदम सटीक है– "ज्ञानरंजन की कहानियाँ एक निर्विकार वस्तुपरक तरीके से और अपने खास कड़वे, कसैले, कामिकल स्वर में मध्यवर्ग की कोशिशों को उकेरती हैं। ... आज भी वे भीतर कोई–न–कोई मंथन, बहस या संवाद शुरू करती हैं तथा उनके सवालों, ख्यालों और आग्रहों में से कुछ आपकी जीवन दृष्टि का हिस्सा बनकर हमेशा साथ रह जाता है।"[2]

ज्ञानरंजन की ऐसी ही एक कहानी है– 'पिता' जो आज भी पाठकों के मनोजगत का एक हिस्सा है। मध्यमवर्गीय हर पिता की झलक इस कहानी के पिता में दिखाई देती है क्योंकि पीढ़ियों का अंतराल चिरकाल तक बना रहेगा। पीढ़ियों का यह द्वंद्व हर युग का हिस्सा है। ज्ञानरंजन ने अपनी भाषा के माध्यम से पिता नामक पात्र को पाठकों के हृदय में जीवंत कर दिया है। इस कहानी को पढ़ते समय सभी के मन में अपने पिता की छवि अवश्य उभर आती है जो ऊपर से कठोर बने रहते हैं किंतु सभी के सुख दुख से परिचित हैं। परिवार की सारी इच्छाएँ पूरी करते हैं किंतु अपनी इच्छाएँ कभी किसी को बताते तक नहीं हैं। बच्चों के जीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप न करते हुए, अपनी जरूरतें कम करते हुए स्वाभिमानी एवं आत्मनिर्भर पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह

भी आज के वृद्ध विमर्श का एक नया दृष्टिकोण है। जहाँ बच्चे सक्षम हैं, वे पिता को सुविधाएं देना भी चाहते हैं किंतु पिता अपने बच्चों पर ज्यादा खर्च नहीं डालना चाहते हैं। यह कहानी पुरानी और नई पीढ़ियों की परिवर्तित सोच एवं बदली हुई परिस्थितियों का चित्रण करती है।

पिता और पुत्र दोनों ही एक दूसरे का ख्याल रखते हैं। दोनों के मध्य एक अनबोला है फिर भी एक भावात्मक लगाव और प्रेम दोनों में दिखाई पड़ता है तभी तो पुत्र पिता की चिंता में रातभर सो नहीं पा रहा है। वह रातभर पिता के ही बारे में सोच रहा है। उसे दुख भी है, क्षोभ भी है कि घर में सभी कमरों में पंखे हैं फिर भी पिता इतनी गर्मी में बाहर पसीने से परेशान हो रहे हैं , सो नहीं पा रहे हैं किंतु वह आकर कमरे में नहीं सोते। पुत्र को क्रोध है पिता क्यों खुद को कष्ट दे रहे हैं – "अंदर कमरों में पंखों के नीचे घर के सभी दूसरे लोग आराम से पसरे हैं। इस साल जो नया पेडस्टल खरीदा गया है वह आंगन में दादी अम्मा के लिए लगता है। बिजली का मीटर तेज चल रहा होगा। पैसे खर्च हो रहे हैं , लेकिन पिता की रात कष्ट में ही है। लेकिन गजब यह नहीं है। गजब तो पिता की जिद है , वह दूसरे का आग्रह–अनुरोध माने तब ना। पता नहीं क्यों , पिता जीवन की अनिवार्य सुविधाओं से भी चिढ़ते हैं। वह झल्लाने लगा।"[3]

यहाँ पुत्र का झल्लाना, खीझना पिता के प्रति उसकी चिंता को व्यक्त करता है। उसे लगता है पिता क्यों नहीं उन सुविधाओं के साथ जीवन–यापन करते जिसे उनके पुत्र उन्हें देना चाहते हैं। पुत्र बड़े उत्साह एवं इच्छा से पिता के लिए श्रेष्ठतम उपहार लाना चाहते हैं लेकिन पिता उन चीजों से कोई लगाव नहीं दिखाते। लेखक कहते हैं उनके दादा भाई ने पिता के लिए अपनी पहली तनख्वाह से एक खूबसूरत शावर बाथरूम में लगाया, उन्हें लगा पिता खुश होंगे किंतु उन्होंने कोई उत्साह प्रकट नहीं किया यहाँ तक कि वे तो बाहर आंगन में ही नहाते हैं उस शावर का तो उपयोग ही नहीं करते। इस कारण पुत्रों में पिता को लेकर रोष उत्पन्न होता है– "वे पुत्र, जो पिता के लिए कुल्लू का सेव मंगाने और दिल्ली एंपोरियम से बढ़िया धोतियाँ मँगाकर उन्हें पहनाने का उत्साह रखते थे, अब तेजी से पिता विरोधी होते जा रहे हैं। सुखी बच्चे भी अब गाहे–बगाहे मुंह खोलते हैं और क्रोध उगल देते हैं।"[4]

कहानी का पात्र 'वह' जो अपने पिता के बारे में सोच रहा है वह अपने पिता के लिए एक कोट का बेहतरीन कपड़ा लाया। पहले तो पिता उसे लेने को तैयार नहीं हुए फिर जब माँ के काफी घुड़कने के बाद राजी हुए तो किसी सस्ते दर्जी के यहाँ सिलाने के लिए चल दिए। सबने कहा कि कपड़ा कीमती है आप अच्छी तरह अच्छी जगह चलकर नाप दिलवा दीजिए तो पिता मना कर

देते हैं। अपने तर्कों द्वारा बच्चों को व्यर्थ पैसा खर्च करने को मना कर देते हैं। बच्चों को यह उनकी जिद लगती है किंतु पिता के लिए यह मितव्ययता है।

पिता स्वाभिमानी भी हैं। वायु सेना में नौकरी करने वाला उसका कप्तान बेटा बहन की यूनिवर्सिटी के खर्चे के लिए दो वर्ष तक पचास रुपये भेजता रहा था। जब वह वापस आया तो पिता ने उसके नाम की बारह–सौ रुपये वाली एक पासबुक थमा दी। उसे लगा पिता का कद सचमुच बड़ा है– "उसे लगा पिता एक बुलंद भीमकाय दरवाजे की तरह खड़े हैं, जिससे टकरा–टकराकर हम सब निहायत पिद्दी और दयनीय होते जा रहे हैं।"[5]

पिता का व्यक्तित्व सच में विराट होता जाता है। मध्यमवर्गीय परिवार में जहाँ पिता ने प्रारंभ से संघर्ष देखा हो वह वृद्धावस्था में पुत्रों को व्यर्थ पैसे लुटाते तथा सुविधाभोगी बनकर पुत्रों को कष्ट में नहीं देख सकता। पिता अपने बच्चों को आधुनिक बनने से नहीं रोकते किंतु स्वयं आधुनिकता की चमक में शामिल नहीं होते। यही द्वंद्व पिता और पुत्र में रहता है। युवा पुत्रों में जिद है, क्रोध है। यहीं से पिता–पुत्र में अलगाव भी दृष्टिगत होता है– " अगर कोई शीत–युद्ध न होता, पिता और पुत्रों के बीच तो वह उन्हें जबरन पंखे के नीचे लाकर सुला देता। लेकिन उसे लगा कि उसका युवापन एक प्रतिष्ठा की जिद कहीं चुराए बैठा है। वह इस प्रतिष्ठा के आगे कभी बहुत मजबूर, कभी कमजोर हो जाता है और उसे भुगत भी रहा है।"[6]

यही वह पुरानी और आधुनिक पीढ़ी का अंतर और उनके बीच का द्वंद्व है जो उनमें अलगाव उत्पन्न करता है। वृद्ध–विमर्शों के दौर की वैचारिकी है जहाँ पिता का घर के बाहर सोना पुत्र की प्रतिष्ठा के लिए अपमान का विषय है। उसे खीझ होती है पिता से, क्यों वह अपने को नहीं बदलते वर्तमान परिवेश के साथ– "कई बार कहा, मोहल्ले में हम लोगों का सम्मान है , चार भले लोग आया जाया करते है, आपको अंदर सोना चाहिए, ढंग के कपड़े पहनने चाहिए और चौकीदारों की तरह रात को पहरा देना बहुत ही भद्दा लगता है। लेकिन पिता की अड़ में कभी कोई झोल नहीं आता। उल्टा–सीधा, पता नहीं कहाँ किस दर्जी से कुर्ता–कमीज सिलवा लेते हैं। टेढ़ी जेब, सदरी के बटन ऊपर–नीचे लगा, सभा–सोसाइटी में चले जाएंगे। घर–भर को बुरा लगता है।"[7]

यह आजकल हर घर की कहानी है। नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी से हमेशा यह आपत्ति रहती है कि वह इस नए युग के साथ खुद को क्यों नहीं बदलता। इसी कारण नई पीढ़ी को लगता है कि पुरानी पीढ़ी 'मिसफिट' होती जा रही है। यही पीढ़ीगत अंतराल सदियों से चला आ रहा है। यहाँ एक बड़ा प्रश्न उभरकर आता है जो दोनों पीढ़ियों को समझना होगा कि आखिर दोनों को ही एक दूसरे को क्यों बदलना है? क्यों ना एक–दूसरे को वैसे ही स्वीकार करें

जैसे वे हैं। उनके जीवन को जीने का तरीका उनका नितांत वैयक्तिक होना चाहिए। किसी को भी किसी को बदलने की आवश्यकता क्यों पड़े। यदि बुजुर्ग पीढ़ी अपनी रूढ़िवादिता को छोड़े उसे अपने बच्चों पर न लादे तथा युवा पीढ़ी अपनी आधुनिकता बुजुर्गों पर न थोपे तो पारिवारिक विघटन तथा पीढ़ीगत अलगाव बहुत हद तक कम हो सकता है। इसी संदर्भ में कमलेश्वर अपनी पुस्तक नई कहानी की भूमिका में लिखते हैं– "और बदले हुए यथार्थ के स्तर पर यदि हम देखें तो नई यानी समकालीन कहानी में एक ओर वे पात्र हैं जो अपने प्रगाढ़ भारतीय संस्कार लिए जीवन के दृश्यपट से विलीन हो रहे हैं– यानी पिता, बुजुर्ग और उम्र के साथ मिटते हुए लोग– 'आद्रा' की मां, 'गुलरा के बाबा' के बाबा, 'चीफ की दावत' की माताजी, 'बिरादरी बाहर' के बाप, 'वापसी' के पिता या 'पिता' के पिता और 'रक्तपात' की मां।"[8]

'पिता' कहानी का पुत्र पिता की मजबूरी भी समझता है, उनके स्वाभिमान को भी मानता है किंतु पिता को सुख देने की आकांक्षा उसे क्रोधी बनाती है, विद्रोही बनाती है। पर फिर भी वह पिता को, उसके आत्म–सम्मान को समझता है। ज्ञानरंजन की भाषा कहानी में इस द्वंद्व को कितनी स्पष्टता से प्रकट करती है– " दरअसल उसका जी अक्सर चिल्ला उठने को हुआ है। पिता , तुम हमारा निषेध करते हो। तुम ढोंगी हो, अहंकारी– वज्र अहंकारी ! लेकिन वह चिल्लाया नहीं।... उसको लगा, पिता लगातार विजयी हैं। कठोर हैं तो क्या, उन्होंने पुत्रों के सामने अपने को कभी पसारा नहीं।"[9]

सचमुच ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी में एक पुत्र की नजर से पिता के त्याग, स्वाभिमान, संघर्ष तथा कठोरता के आवरण के पीछे छिपे परिवार के प्रति प्रेम को दर्शाया हैं। पुत्र जो पिता से नाराज है। पर जानता है पिता ऊपर से कितना भी कठोर क्यों ना हो जाए; भीतर से पूरे परिवार के सुखों के लिए अपनी खुशियों की आहुति देने वाले और अपने त्याग का बखान न करके चुपचाप अपने स्वाभिमान के साथ जीवन निर्वाह करते हैं। पिता किसी को कहते नहीं हैं फिर भी उन्हें सबकी चिंता है। इन सारी स्थितियों की समीक्षा लेखक ने पुत्र की नजरों से की है। वह पिता की मजबूरी से भी अवगत है– "वह विषादग्रस्त हुआ और अनुभव करने लगा , हमारे समाज में बड़े–बूढ़े लोग जैसे बहू– बेटियों के निजी जीवन को स्वच्छंद रहने देने के लिए अपना अधिकांश समय बाहर व्यतीत किया करते हैं , क्या पिता ने भी वैसा ही करना तो नहीं शुरू कर दिया है? उसे पिता के बूढ़ेपन का ख्याल करके सिहरन हुई। फिर उसने दृढ़ता से सोचा, पिता अभी बूढ़े नहीं हुए हैं। उन्हें प्रतिक्षण हमारे साथ–साथ जीवित रहना चाहिए, भरसक। पुरानी जीवन– व्यवस्था कितनी कठोर थी, उसके मस्तिष्क में एक भिंचाव आ गया।"[10]

पुत्र पिता के प्रति असंतोष और सहानुभूति, दोनों के बीच असंतुलित भटकता रहता है। इस प्रकार वृद्ध जीवन को युवा पीढ़ी के माध्यम से समझने का एक सकारात्मक प्रयास है– 'पिता' कहानी। यह कहानी वृद्ध जीवन को नए संदर्भ में देखने का प्रयास है। वह पिता जो अपने अभावों, कष्टों को लेकर कभी मुखर नहीं होता, कभी शिकायत नहीं करता, सदैव कठोर बना रहता है। निर्लिप्त रहता है– जीवन की सुख–सुविधाओं से। अहंकारी, कठोर, दृढ़, जिद्दी बना रहता है। उसे लेखक ने पुत्र के माध्यम से मुखर बनाया है। पिता के संघर्ष, उसके स्वाभिमान, उसकी मितव्ययता, उसकी परिवार के प्रति चिंता, उसकी महानता को पुत्र के द्वारा समझना– यही भारतीय पारिवारिक जीवन की वह डोर है जो तमाम वैचारिक मतभेद के पिता और पुत्र के बीच एक प्रेमयुक्त और भावनात्मक संबंधों को बनाए रखती है। जो पिता और पुत्र के संबंधों का एक खुला आकाश बनाती है।

संदर्भ

1. डॉ. राम प्रसाद त्रिपाठी : हिंदी विश्वकोश, पृ. 203
2. ज्ञानरंजन : ज्ञानरंजन संकलित कहानियां, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत 2014
3. ज्ञानरंजन : पिता (ज्ञानरंजन संकलित कहानियां) राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2014 पृ. 2
4. वही, पृ. 3
5. वही, पृ. 7
6. वही, पृ. 6
7. वही, पृ. 3–4
8. कमलेश्वर : नई कहानी की भूमिका , राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2015 पृ. 19
9. ज्ञानरंजन : पिता (ज्ञानरंजन संकलित कहानियां) राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, 2014 पृ. 6
10. वही, पृ. 6

सहायक आचार्य, हिन्दी–विभाग
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय,
उदयपुर (राज.)
मोबाइल नं. 9950960999
ई मेल : nkntrivedi@gmail.com

डॉ. दिलीप मेहरा

डॉ. दिलीप मेहरा

जन्म : 27 दिसम्बर 1968, बार, ता. वीरपुर, जनपद- खेड़ा, गुजरात

शिक्षा : एम.ए. (स्वर्ण पदक), एम.फिल., पीएच.डी.

सम्प्रति : आचार्य, हिन्दी विभाग, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर

प्रधान संपादक : साहित्य वीथिका, त्रैमासिक (अन्तर्राष्ट्रीय)

प्रोजेक्ट : यू.जी.सी. का मेजर प्रोजेक्ट सम्पन्न

पुरस्कार : नागरी प्रचारिणी सभा देवरिया द्वारा हिंदी भाषा एवं साहित्य के लिए नागरी रत्न (2015), भारतीय दलित साहित्य अकादमी, नई दिल्ली से अम्बेडकर फेलोशिप (2011), महाराष्ट्र दलित साहित्य अकादमी भुसावल से रवीन्द्रनाथ टैगोर लेखक पुरस्कार (2010), गुजरात हिन्दी साहित्य अकादमी द्वारा 2019 में **दलित संदर्भ और हिन्दी उपन्यास** (आलोचना) प्रथम पुरस्कार और **मकान पुराण** (कहानी संग्रह) 2019 द्वितीय पुरस्कार

प्रकाशित कृतियाँ :

1. मन्नू भण्डारी के कथा-साहित्य में मानव जीवन की समस्याओं का निरूपण 2. मन्नू भण्डारी का कथा-संसार 3. उपन्यासकार धर्मवीर भारती 4. साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास 5. मध्यकालीन हिन्दी काव्य 6. हिन्दी उपन्यास : नये आयाम 7. मीडिया लेखन 8. दृश्य-श्रव्य माध्यम : विविध परिप्रेक्ष्य 9. हिन्दी कथा साहित्य में दलित विमर्श 10. हिन्दी महिला कथाकारों के साहित्य में नारी विमर्श 11. प्रेमचन्द के कथा साहित्य में सामाजिक सरोकार 12. वाङ्मय वाटिका के विविध रंग 13. दलित केन्द्रित हिन्दी उपन्यास 14. आदिवासी संवेदना और हिन्दी उपन्यास 15. इक्कीसवीं सदी का गद्य साहित्य 16. हिन्दी उपन्यासों में किन्नर समाज 17. जल संस्कृतिन वाहक (गुजराती) 18. हिन्दी साहित्य में किन्नर जीवन 19. दलित संदर्भ और हिन्दी उपन्यास 20. समकालीन हिन्दी साहित्य में डॉ. पारूकान्त का योगदान 21. मकान पुराण (कहानी-संग्रह) 22. हिन्दी कथा साहित्य में आदिवासी संवेदना

आलेख : 120 से अधिक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित

सम्पर्क : 'यश भवन' प्लाट नं. 1423/1, शालिनी अपार्टमेन्ट के पीछे, नाना बाजार, वल्लभ विद्यानगर, जिला-आनन्द, गुजरात-388120

चलभाष : 09426363370

ई-मेल : mehradilip52@gmail.com

Also available at : flipkart amazon

उत्कर्ष पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स

ए-685 कैनाल रोड, आवास विकास हंसपुरम्, नौबस्ता कानपुर

Email : utkarshpublishersknp@gmail.com

Mob. : 8707662869, 9554837752

₹1195/-

ISBN 978-81-950501-8-5

9 788195 050185 >